P: ISSN NO.: 2394-0344 RNI No.UPBIL/2016/67980 VOL-3* ISSUE-9*(Part-2) December- 2018
E: ISSN NO.: 2455-0817 *Remarking An Analisation*

# भीष्म साहनी के नाटकों में मिथकीय एवं रंगमंचीय प्रयोग

**आलोक मिश्र**
एसोसिएट प्रोफेसर एवं अध्यक्ष,
हिन्दी विभाग,
स्वामी शुकदेवानन्द
स्नातकोत्तर महाविद्यालय,
शाहजहाँपुर, उत्तर प्रदेश
भारत

**सारांश**

हिन्दी साहित्य की विविध विधाओं में नाटक प्राचीन एवं लोकप्रिय विधा है। संस्कृत साहित्य से ही नाटक अपने उत्कर्ष को प्राप्त हुआ। हिन्दी में नाटकों की अवछिन्न धारा निरन्तर प्रवाहित हो रही है। हिन्दी के नाटकों में विविध प्रयोग विद्यमान हैं। इन प्रयोगों से ही नाटकारों ने समाज के विविध पक्षों को उकेर कर सहज, सरल और जनोपयोगी बनाने में महत्वपूर्ण योगदान दिया। इसी परम्परा को भीष्म साहनी ने भी आगे बढ़ाया। इस विषय के कतिपय पक्षों को शोध दृष्टि से देखने का प्रयास वर्तमान शोधपत्र में किया गया है।

**मुख्य शब्द :** अवछिन्न, मिथकीय, सत्यान्वेषी, अभिनेता, रंगशिल्प, प्रेक्षागृह

**प्रस्तावना**

मिथकीय प्रयोगों की दृष्टि में साहनी जी के सभी नाटक पूर्णतः सफल प्रतीत हुए हैं। परन्तु उनके 'कबिरा खड़ा बाजार में', 'माधवी', रंग दे बसन्ती चोला, 'आलमगीर' यह चार नाटक विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं क्योंकि इनका कथानक ऐतिहासिक और पौराणिक आधार पर निर्मित हैं इसीलिए इनमें मिथकीयता का सफल प्रयोग किया जा सका है। इसे मिथकीय तत्व की तलाश हम उनके नाटक 'कबिरा खड़ा बाजार में' से प्रारम्भ कर रहे हैं।

**कबिरा खड़ा बाजार में**

इस नाटक का कथानक कबीर के जीवन से सम्बन्धित हैं। साहनी जी ने कबीर का जन्म विधवा ब्राह्मणी से दिखाया है। यह बात कबीर का लालन–पालन करने वाले उसके बाप नूरा के इन शब्दों से स्वतः सिद्ध हो जाती है वह कहता है कि ''उस वक्त भी मेरी बांयी आँख फड़की थी, जिस वक्त तू उसे उठा लाई थी। अंदर से मेरे दिल ने कहा था कि नूरा, भूल रहे हो, परन्तु मेरे सिर पर सवार हो गई, मैं क्या करता?''[1] अतः कबीर को नूरा और नूरी का पालित खुद साहनी जी ने अपने इस नाटक में सिद्ध किया है। इस नाटक के जरिए साहनी जी ने कबीर के उत्तर व्यक्तित्व का चित्रण सफलता से किया है जिसके लिए नाटककार ने कल्पना का सहारा भी लिया है।

अपने नाटक के लक्ष्य का उद्घाटन करते हुए भीष्म साहनी जी ने अपने इस नाटक की भूमिका में लिखा है कि ''अपने काल के यथार्थ और उस यथार्थ के विरूद्ध उनके विकट संघर्ष को न दिखाकर कबीर को ब्रम्ह में लीन, अध्यात्म के गायक सन्त के रूप में दिखाना कबीर के साथ भी अन्याय करना ही है।

नाटक में उनके काल की धर्मान्धता, अनाचार, तानाशाही आदि के सामाजिक परिप्रेक्ष्य में उनके निर्भीक सत्यान्वेषी, प्रखर व्यक्तित्व को दिखाने की कोशिश है.....परन्तु यदि वह सामाजिक परिवेश को किसी हद तक भी स्थापित कर पाया है, जिसके सन्दर्भ में कबीर सक्रिय थे, तो मैं इस प्रयास को सार्थक ही मानूँगा।''[2] दो शब्द के रूप में साहनी जी ने इसके सम्बन्ध जो कहा है उससे यह बात निर्विवाद रूप से सत्य प्रतीत होती है कि यह नाटक कल्पना और मिथक का विराट समन्वय है।

**माधवी**

महाभारत कालीन घटना पर आधारित यह नाटक विश्वामित्र के शिष्य गालव तथा उसके हठ से प्रारम्भ होता हैं गालव जब विद्या ग्रहण कर लेता है तब अपने स्वभाव के अनुसार अपने गुरू विश्वामित्र से गुरू दक्षिणा लेने का हठ करता है परिणामस्वरूप विश्वामित्र क्रोधित होकर गुरू दक्षिणा में आठ सौ अश्वमेधी घोड़े देन को कहते हैं। जिसकी पूर्ति के लिए भटकते हुए गालव महादानी ययाति के पास पहुँचता है। ययाति अपनी कन्या माधवी को गालव की सहायता के लिए दान कर देते हैं जिसका सर्वस्व त्याग करने पर गालव की गुरू दक्षिणा और उसके हठ की पूर्ति हो जाती है। परन्तु अन्त में वह माधवी को स्वीकार करने में ना–नकुर करता है। अर्थात् पूरा नाटक पुरूष की स्थायी वृत्ति का उद्घाटन करता है। और नारी के शोषण का जिम्मेदार पुरूष वृत्ति को

माना है। इस बात की सिद्धि इस नाटक में चाहें राजा ययाति जो अपने दानी होने के गर्व में अपनी पुत्री की इच्छा–अनिच्छा का ख्याल रखे बगैर दान करते है, वही गालव अपनी स्वार्थ सिद्ध का निमित्त मात्र माधवी को बनाता है और हद तो तब हो जाती है जब विश्वामित्र भी उसे एक वर्ष तक अपने आश्रम में माधवी के साथ सहवास करते हैं। यही वृत्ति उन तीनों राजाओं की भी है। पूरा नाटक माधवी के जीवन पर घटित है जिसमें पुरूष की स्वार्थी वृत्ति का उद्घाटन करने में साहनी जी पूर्ण सफल हुए हैं।

यह पूरा नाटक पौराणिक मिथक पर आधारित है जिसे रचनाकार ने अपनी कल्पना के रंग में रंगकर बड़े ही सार्थक रूप में प्रस्तुत किया है। इस नाटक की समीक्षा करते हुए जावेद अख्तर खां साहब लिखते हैं ''माधवी की तुलना सिर्फ एक मिथकीय चरित्र के साथ की जा सकती है, वह है–महारथियों के बीच घिरा अभिमन्यु। माधवी इस अर्थ में अभिमन्यु से भी आगे है क्योंकि वह चक्रव्यूह तोड़कर निकल जाती है।''[3]

उपरोक्त कथन स्पष्ट हो जाता है कि साहनी जी ने पौराणिक कथा को मिथकीय आधार प्रदान कर समाज के उस यथार्थ का चित्रण किया है जिसमें एक नारी का शोषण पूरा का पूरा पुरूष समाज करता दिखाई देता है। यह एक सामाजिक सत्य है।

**रंग दे बसन्ती चोला**

साहनी जी का यह नाटक पंजाब राज्य के अमृतसर में घटित उस नृशंस हत्याकाण्ड का उद्घाटन करता है। भीष्म जी ने उन दो परिवारों का उल्लेख किया है जो राष्ट्रीय भावना से ओत–प्रोत हैं उनके घरों में बैशाखी का पर्व मनाया जाता है। उसी दौरान यह अमानवीय घटना घट जाती है।

इस ऐतिहासिक घटना को मिथक और कल्पना के माध्यम से साहनी जी ने पूर्णतया जीवंत कर दिखाया है। इसी जीवंतता के कारण यह नाटक अपने उद्देश्य को प्राप्त करने में सफल प्रतीत होता है। अर्थात् इस नाटक की रचना ऐतिहासिक घटना को कल्पना और मिथक का प्रयोग कर लेखक ने अपने प्रयोगधर्मी होने का परिचय प्रस्तुत किया है।

**आलमगीर**

इस नाटक की रचना भी ऐतिहासिक कथानक पर आधारित है जिसे मिथकीय प्रयोग के द्वारा सफलता प्रदान की गई है। इसमें औरंगजेब की उस महत्वाकांक्षा का चित्रण किया गया है। वह अपने आप से ज्यादा किसी को महत्व नहीं देता है। इसी घटना को लक्ष्य कर भीष्म जी ने मिथकीय प्रयोग करके एक नये अंदाज में प्रस्तुत किया है। इसीलिए यह नाटक भी अपना एक अलग महत्व रखता है।

भीष्म जी के इन्हीं नाटकों की समीक्षा करते हुए डॉ0 सुरैय्या शेख जी ने लिखा है कि ''साहनी जी ने अपने नाटकों में ऐतिहासिक और पौराणिक कथाओं को आधार बनाकार मिथक लाने का प्रयत्न किया है।... ऐतिहासिक नाटक को और अधिक सजीव बनाने का प्रयत्न किया है।''[4]

भीष्म जी के उपरोक्त नाटकों पर विचार करने के उपरान्त हम निःसंकोच रूप से कह सकते हैं कि उन्होंने अपने नाटकों में काफी हद तक मिथकीयता का प्रयोग किया है जिसमें उन्हें एक सीमा तक सफलता भी प्राप्त हुई है।

**रंगमंचीय प्रयोग**

साहनी जी अपने प्रसिद्ध नाटक 'हानूश' की रचना करने से पहले एक प्रसिद्ध कथाकार के रूप में जाने जाते थे फिर कब ? क्यों ? कैसे ? एक कथाकार नाटककार बन गया। इस तथ्य का उद्घाटन करते हुए डॉ0 गिरीश रस्तोगी जी कहते हैं कि ''हानूश'' की रचना के समय हिन्दी रंगमंच की गतिविधियाँ तीव्र थी, नाट्य लेखन की गति उतनी ही धीमी थी। ऐसे समय में 'हानूश साहनी जी के कथाकार में छिपे नाटककार की रचनात्मकता से पहला परिचय ही नहीं कराता सुखद आश्चर्य की अनुभूति भी कराता है।''[5]

चूँकि प्रत्येक रचना के पीछे की संवेदना अपना मुख्य कार्य करती है जिसका सफल संवेदनात्मक संप्रेषण रंगमंच पर नाटक की परिणति से होता है। वस्तुतः रंगमंच के अन्तर्गत नाटक, निर्देशक, अभिनेता, दर्शन, रंगशिल्पी, प्रेक्षागृह मंच आदि का अपना एक अलग महत्व होता है। परन्तु मूलतः वह नाटककार की संवेदना पर आधारित होता हैं। इस दृष्टि से हम साहनी जी के नाटकों में रंगमंचीय तत्वों को तलाशने का प्रयत्न कर रहे हैं।

**हानूश**

नाटक क्रम के अनुसार यह साहनी जी का पहला नाटक है। उन्होंने इस नाटक की नई परिभाषा देकर रंगमंच का काफी विकास किया और इसीलिए इन नाटक के जरिए जीवन की विसंगति उसकी विडम्बना को नाटककार ने बड़ी कुशलता से पूर्ण संवेदना के साथ कुशल रंगमंचीय निर्देश देकर चित्रित किया है। नाटककार ने कई जगहों पर रंगमंचीय निर्देश दिए हैं। हानूश नाटक की रंगमंचीयता को उजागर करते हुए डॉ0 गिरीश रस्तोगी जी कहते हैं कि ''दृश्यबंध के नये प्रयोग की निरर्थकता को व्यक्त करता हुआ 'हानूश' नाटक इस सत्य को प्रकाशित करता है कि, हिन्दी रंगमंच को पश्चिमी रंगशिल्प या कृत्रिम रंगशिल्प की आवश्यकता नहीं है।''[6] इसी तारतम्य में नरनारायण रायजी के विचारों को देखना आवश्यक प्रतीत होता है, वे कहते हैं कि ''हानूश के प्रणयन की अपनी एक विशेष पृष्ठभूमि नाटककार ने स्वीकार की है। नाटक में नाटककार भीष्म साहनी ने तमाम आजादी का खुलकर प्रयोग किया है जो किसी भी रचयिता का 'अपारे काव्य संसारे कविरेक : प्रजापति' होने के नाते सहज ही प्राप्त होता है। इसी अधिकार से नाटककार ने मध्ययुग का एक भरा–पूरा परिवेश गढ़ा काल्पनिक घटना–विन्यास द्वारा कथावस्तु का निर्माण किया और कथा का भार ढोने के लिए उपयुक्त चरित्र गढ़े।....कलाकार को शासन द्वारा प्रताड़ित किया जाना ही वह बिन्दु है जहाँ दर्शकों का नाट्यानुभूति से साक्षात्कार संभव हो सकता है।.....किसी भी नाट्य रचना के रंग आपेक्षता इसमें है कि नाटक की कथावस्तु में मौजूद कथ्य, नाटककार का अनुभूत सत्य, मंचीय साक्ष्य से मूर्तता प्राप्त करती है और इस प्रकार मंचीय–माध्यम से जीवन

की व्याख्या प्रस्तुत करती है। स्वभावतः नाटक की रंग सापेक्षता नाटक के कथ्य–सत्य से जुड़ जाती है।.....

प्रसिद्ध नाटय संस्था 'अभियान' द्वारा राष्ट्रीय नाट्य समारोह में इस नाटक का अभिनन्दन प्रस्तुत किया गया और इस प्रकार यह प्रमाणित किया गया है कि नाटक में मंच–सापेक्षता के तत्व, रंगधर्मिता विद्यमान है।''[7]

इस नाटक की समीक्षा करते हुए नरनारायण जी ने इस नाटक की रंगमंचीयता के सन्दर्भ में जो बात कहते है वह उल्लेख योग्य है जरा देखें–किसी भी निर्देशक की सूझ–बूझ, कल्पना, कौशल और अनुभव से इस नाटक में नई भंगिमाएं उत्पन्न की जा सकेंगी जिससे हर नये प्रदर्शन का अपना आकर्षण बना रह सके, उसमें नवीनता लाई जा सकेगी।''[8]

अतः 'हानूश' नाटक के सन्दर्भ में कहा जा सकता है कि रंगमंचीय दृष्टि से सफल नाटक है।

**कबिरा खड़ा बाजार में**

रंगमंचीय प्रयोग की दृष्टि से यह नाटक काफी सफल रहा है क्योंकि इस नाटक की रचना कबीर में मस्त–मौला फक्कड़ व्यक्तित्व पर आधारित है। इस नाटक की रंगमंचीयता को इंगित करते हुए स्वयं साहनी जी ने इसकी भूमिका 'दो शब्द' में लिखी है कि ''मंचन में अनेक जगह पर छोटी–मोटी, जोड़–तोड़ भी की गई है, जैसे– दो दृश्यों में पहला दृश्य। इसी प्रकार पहले अंक के दूसरे दृश्य में कोतवाल और कायस्थ के प्रकट होने से पहले, प्रभातबेला की एक छोटी सी झांकी प्रस्तुत की गई है,..... .....मस्जिदों की अजान आदि सुनाई हैं। इससे काशी का वातावरण तैयार करने में काफी मदद मिली।[9]

साहनीजी ने नाटक की रंगमंचीयता में आने वाली कठिनाइयों को काफी हद तक दूर करने का प्रयास किया है जिसकी स्वीकृति उन्होंने इस नाटक की भूमिका में की भी है। इस आधार पर निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि रंगमंचीय दृष्टि से यह नाटक कुछ कठिनाइयों को छोड़कर काफी कहा जा सकता है तथा यह नाटक रंगमंचीय तत्वों में नवीनता लाता है जो एक रंगमंचीय प्रयोग है इस दृष्टि से कुछ बातों को छोड़कर यह नाटक काफी समृद्ध माना जाएगा।

**माधवी**

इस नाटक के निर्माण के समय साहनी जी का कथाकार हावी रहा है। फिर भी यह रचना नाटककार द्वारा एक नवीन प्रयोग की भूमिका खड़ी करती है। इस नाटक के पात्रों के अलग–अलग पक्षों पर बल देकर साहनी जी ने एक नवीन प्रयोग किया है। जिसके सफल प्रस्तुतीकरण के लिए दृश्यत्व को नवीन ढंग से करना होगा।

इस दृष्टि से कथ्य को दृश्यत्व तक ले जाने में साहनी जी को पूर्ण सफलता नहीं प्राप्त हो सकी। अतः यह नाटक रंगमंचीय दृष्टि से कुछ महत्व का प्रतीत होता है।

**रंग दे बसन्ती चोला**

इस नाटक की रचना ऐतिहासिक घटना पर आधारित है जिसमें साहनी जी ने अपनी कल्पना का काफी हद तक चित्रण किया है। इस नाटक का कथानक जलियांवाला बाग हत्याकाण्ड की घटना पर आधारित है। यह नाटक भीष्म जी की रंगमंचीयता की जीता–जागता रूप प्रस्तुत करता है।

साहनी जी ने इस नाटक के मंचन में आने वाली कठिनाइयों को समझकर प्रारम्भ से ही रंग निर्देश करते चले हैं। आज इस नाटक की रंगमंचीयता की दृष्टि से सैकड़ों सफल प्रस्तुतियाँ हो चुकी हैं जिनके आधार पर हम निःसंकोच भाव से कह सकते हैं कि यह नाटक कुछ अपवादों को छोड़कर पूर्ण रूप से सफल रंगमंचीय नाटक है।

**मुआवजे**

साहनी जी का यह क्रम से चौथा नाटक है जो रंगमंचीय दृष्टि से काफी सफल माना जाता है। इस नाटक का कथानक साम्प्रदायिक दंगों के ताने–बाने से निर्मित है जिसमें सामान्य जनता, पुलिस, नेता आदि के चरित्र को यथार्थ भाव–भूमि पर चित्रित किया है। पूरे नाटक में विडम्बना ही विडम्बना विद्यमान है।

साहनी जी ने स्वयं इस नाटक सन्दर्भ में लिखा हैं कि ''मुआवजे के मंचन में निर्देशक को दो दिक्कतों का सामना करना पड़ सकता है– एक तो पात्रों की संख्या अधिक है। इसके लिए एक–एक रंगकर्मी को एक से अधिक भूमिका निभानी पड़ सकती है। दूसरे– जिस ओर ध्यान देना मैं आवश्यक मानता हूँ–नाटक की गंभीर विषय–वस्तु और उसकी व्यंग्यात्मकता अभिव्यक्ति के बीच संतुलन बनाए रखना जरूरी है।''[10]

वस्तुतः कहा जा सकता है कि नाटककार ने स्वयं इसकी रंगमंचीयता की कठिनाई को इंगित किया है। जिसका कारण है इसमें पात्रों की भरमार का होना। परन्तु फिर भी इस नाटक के कई सफल मंचन हो चुके हैं क्योंकि एक प्रयोगधर्मी नाटककार के नाते साहनी जी अपने प्रत्येक नाटक में कुछ न कुछ नया प्रयोग अवश्य करते हैं। इस दृष्टि से साहनी जी का यह नाटक भी रंगमंचीयता की दृष्टि से एक नवीन प्रयोग है क्योंकि नये–नये प्रयोग करना प्रयोगधर्मी होने के नाते उनकी आदत में शुमार हो चुका है।

**आलमगीर**

यह पूर्णतया ऐतिहासिक भाव–भूमि का पुरोधा नाटक है जिसके मंचन में प्रारम्भ से ही काफी कठिनाइयाँ आती रही हैं क्योंकि इसकी घटनाएं बड़ी हैं।

साहनी जी ने इस नाटक में जो रंगमंचीय निर्देश दिए हैं वे नाकाफी साबित हुए हैं। फिर भी यह रंगमंच पर कुछ परिवर्तन और परिवर्द्धन करने के उपरान्त अभिनीत किया जाता रहा है। इसमें लेखक की संवेदना को कल्पना के साँचे में ढालकर प्रस्तुत किया गया है। उन्होंने इस नाटक के जरिए धर्मनिरपेक्षता की गलत परिभाषा को नये अंदाज में अपने इस नाटक में चित्रित किया है। अतः यह नाटक कुछ अपवादों को छोड़कर एक हद तक रंगमंचीय प्रयोगों की श्रेणी में शामिल हो जाता है।

साहनी जी के नाटकों में रंगमंचीय प्रयासों को तलाशने के क्रम में अगले नाटक का नाम है– 'फूजीयामा'।

**फूजीयामा**

यह एक अनुवादित नाटक है जो मूलतः रूसी भाषा का है। भीष्म जी की पुत्री डॉ0 कल्पना साहनी ने

इसका अंग्रेजी में अनुवाद किया और तब भीष्म जी ने इसका अनुवाद हिन्दी में किया और इसे रंगमंचीय आधार प्रदान कर हिन्दी जगत को एक अमूल्य नाट्य कृति प्रदान की।

इस नाटक के रचनाकाल के लगभग तेरह वर्ष के उपरान्त इसका मंचन किया गया जो काफी सफल रहा, जिसकी विद्वानों ने काफी सराहना भी की है।

**अध्ययन का उद्देश्य**

प्रस्तुत शोधपत्र भीष्म साहनी के नाटकों में विविध प्रयोगों को शोध की दृष्टि से देखने का प्रयास है।

**निष्कर्ष**

साहनी जी के नाटकों में मिथकीय एवं रंगमंचीय प्रयोगशीलता को देखने के उपरान्त कहा जा सकता है कि वे सच्चे प्रयोगधर्मी नाटककार होने के नाते अपने प्रत्येक नाटक में कुछ न कुछ नवीन प्रयोग करते रहे हैं और उन प्रयोगों में उन्हें काफी सफलता भी प्राप्त हुई है।

**अंत टिप्पणी**

1. *भीष्म साहनी : 'कबिरा खड़ा बाजार में', पृ0 14।*
2. *भीष्म साहनी : 'कबिरा खड़ा बाजार में', नाटक की भूमिका 'दो शब्द' से।*
3. *सं0 नामवर सिंह : 'आलोचना' त्रैमासिक जनवरी–मार्च 1985, पृ0 84।*
4. *डॉ0 सुरैय्या शेख : नाटककार भीष्म साहनी, पृ0 71।*
5. *डॉ0 गिरीश रस्तोगी : भीष्म साहनी, 'हानूश' पृ0 15।*
6. *वही, पृ0 7।*
7. *सं0 प्रताप ठाकुर : राजेश्वर सक्सेना, भीष्म साहनी व्यक्ति और रचना', पृ0 168।*
8. *वही, पृ0 180।*
9. *भीष्म साहनी : 'कबिरा खड़ा बाजार में', नाटक की भूमिका 'दो शब्दों' से।*
10. *वही, 'मुआवजे', पृ0 5।*